ऋग्वेद संहिता

(सरल हिन्दी भावार्थ सहित)

भाग-२

(मण्डल ३, ४, ५, ६)

सम्पादक

वेदमूर्ति तपोनिष्ठ पं. श्रीराम शर्मा आचार्य

भगवती देवी शर्मा

Scanned with CamScanner

दूरवर्ती (भावी) अमंगलकारी दिन के पहले ही स्तुति करते हैं, जिससे वे इन्द्रदेव हमें दुःखों से मुक्ति दिलाएँ । जैसे नाव वाले को दोनों तटों के लोग बुलाते हैं, वैसे ही इन्द्रदेव को हमारे मातृ-पितृ दोनों पक्षों के लोग बुलाते हैं ॥१४॥

२७५२. **आपूर्णो अस्य कलशः स्वाहा सेक्तेव कोशं सिसिचे पिबध्यै ।**
समु प्रिया आववृत्रन्मदाय प्रदक्षिणिदभि सोमास इन्द्रम् ॥१५ ॥

यह सोमरस से परिपूर्ण कलश इन्द्रदेव के पीने के लिए है । जैसे सिंचनकर्त्ता क्षेत्र को सिंचित करते हैं, वैसे ही हम इन्द्रदेव को स्वाहाकार सहित सोमरस से सींचते हैं । प्रिय सोम इन्द्रदेव के मन को प्रमुदित करने के लिए प्रदक्षिणा करता हुआ उनके समीप पहुँचे ॥१५ ॥

२७५३. **न त्वा गभीरः पुरुहूत सिन्धुर्नाद्रयः परि षन्तो वरन्त ।**
इत्था सखिभ्य इषितो यदिन्द्रा दृळ्हं चिदरुजो गव्यमूर्वम् ॥१६ ॥

बहुतों द्वारा आवाहन किये जाने वाले हे इन्द्रदेव ! मित्रों द्वारा प्रेरित होकर आपने/रश्मि समूह को छिपाने वाले सुदृढ़ मेघों को फोड़ा । गम्भीर समुद्र और चारों ओर विस्तृत पर्वत भी आपको नहीं रोक सके ॥१६ ॥

२७५४. **शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन्भरे नृतमं वाजसातौ ।**
शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि सञ्जितं धनानाम् ॥१७ ॥

हम अपने जीवन-संग्राम में संरक्षण प्राप्ति के लिए इन्द्रदेव को बुलाते हैं । वे पवित्र करने वाले सभी मनुष्यों के नियन्ता, हमारी स्तुतियों को सुनने वाले, उग्र, युद्धों में शत्रुओं का विनाश करने वाले, धनों के विजेता और ऐश्वर्यवान् हैं ॥१७ ॥

[सूक्त - ३३]

[**ऋषि-** विश्वामित्र गाथिन; ४,६,८,१० नदियाँ (ऋषिका) । **देवता-** नदियाँ; ४,८,१० विश्वामित्र; ६,७ इन्द्र । **छन्द-** त्रिष्टुप्; १३ अनुष्टुप् ।]

२७५५. **प्र पर्वतानामुशती उपस्थादश्वेइव विषिते हासमाने ।**
गावेव शुभ्रे मातरा रिहाणे विपाट्छुतुद्री पयसा जवेते ॥१ ॥

बन्धन से विमुक्त होकर हर्षयुक्त नाद करते हुए दो घोड़ियों की भाँति अथवा अपने बछड़ों से सस्नेह- मिलन के लिए उतावली, दो गायों की भाँति विपाट् (व्यास) और शुतुद्रि (सतलज) नाम की नदियाँ पर्वत की गोद से निकलकर समुद्र से मिलने की अभिलाषा के साथ प्रबल वेग से प्रवाहित हो रही हैं ॥१ ॥

२७५६. **इन्द्रेषिते प्रसवं भिक्षमाणे अच्छा समुद्रं रथ्येव याथः ।**
समाराणे ऊर्मिभिः पिन्वमाने अन्या वामन्यामप्येति शुभ्रे ॥२ ॥

हे नदियो ! आप दोनों इन्द्र द्वारा प्रेरित होकर सम्यक् रूप से अनुकूलतापूर्वक प्रवहमान हों । हे उज्ज्वला ! अपनी तरंगों से सबको तृप्त करती हुई आप दोनों धान्य उत्पत्ति में समर्थ हों । दो रथियों के समान समुद्र की ओर गमन करें ॥२ ॥

२७५७. **अच्छा सिन्धुं मातृतमामयासं विपाशमुर्वीं सुभगामगन्म ।**
वत्समिव मातरा संरिहाणे समानं योनिमनु सञ्चरन्ती ॥३ ॥

ऋषि विश्वामित्र कहते हैं कि हम स्नेह-सिक्त मातृ-तुल्य शुतुद्रि (सतलज) नदी के पास गये और विपुल

Scanned with CamScanner

ऐश्वर्य-राशि से सम्पन्न विपाशा नदी के पास गये । बछड़े के प्रति स्नेहाभिलाषिणी गौओं के समान ये नदियाँ एक ही लक्ष्य-स्थान समुद्र की ओर सतत बहती हुई जा रही हैं ॥३ ॥

२७५८. एना वयं पयसा पिन्वमाना अनु योनिं देवकृतं चरन्तीः ।
न वर्तवे प्रसवः सर्गतक्तः किंयुर्विप्रो नद्यो जोहवीति ॥४ ॥

हम नदियाँ अपने जल-प्रवाह से सबको तृप्त करती हुईं देवों द्वारा स्थापित स्थान की ओर बहती हुई जा रही हैं । अनवरत प्रवहमान हम अपने प्रयास से कभी भी विश्राम नहीं लेती हैं (यह तो हमारा सहज सामान्य क्रम है), फिर ब्राह्मण विश्वामित्र द्वारा हमारी स्तुति क्यों की जा रही है ? ॥४ ॥

२७५९. रमध्वं मे वचसे सोम्याय ऋतावरीरुप मुहूर्तमेवैः ।
प्र सिन्धुमच्छा बृहती मनीषावस्युरह्वे कुशिकस्य सूनुः ॥५ ॥

हे जलवती नदियो ! आप हमारे नम्र और मधुर वचनों को सुनकर अपनी गति को एक क्षण के लिए विराम दे दें । हम कुशिक पुत्र अपनी रक्षा के लिए महती स्तुतियों द्वारा आप नदियों का भली प्रकार सम्मान करते हैं ॥५ ॥

२७६०. इन्द्रो अस्माँ अरदद्वज्रबाहुरपाहन्वृत्रं परिधिं नदीनाम् ।
देवोऽनयत्सविता सुपाणिस्तस्य वयं प्रसवे याम उर्वीः ॥६ ॥

(नदियों की वाणी) हे विश्वामित्र ! वज्रधारी इन्द्रदेव ने हमें खोदकर उत्पन्न किया । नदियों के प्रवाह को रोकने वाले वृत्र को उन्होंने मारा । सबके प्रेरक, उत्तम हाथों वाले और दीप्तिमान् इन्द्रदेव ने हमें बढ़ने के लिए प्रेरित किया । उनकी आज्ञा के अनुसार ही हम जल से परिपूर्ण होकर गमन करती हैं ॥६ ॥

२७६१. प्रवाच्यं शश्वधा वीर्य१न्तदिन्द्रस्य कर्म यदहिं विवृश्चत् ।
वि वज्रेण परिषदो जघानायन्नापोऽयनमिच्छमानाः ॥७ ॥

इन्द्रदेव ने अहि नामक असुर को मारा; उनके वे पराक्रम और कर्म सर्वदा वर्णनीय हैं । जब इन्द्रदेव ने अपने चारों ओर स्थित असुरों को मारा, तब जल-प्रवाह समुद्र से मिलने की इच्छा करते हुए प्रवाहित हुआ ॥७ ॥

२७६२. एतद्वचो जरितर्मापि मृष्ठा आ यत्ते घोषानुत्तरा युगानि ।
उक्थेषु कारो प्रति नो जुषस्व मा नो नि कः पुरुषत्रा नमस्ते ॥८ ॥

हे स्तोता (विश्वामित्र) ! अपने ये स्तुति-वचन कभी भूलना नहीं । भावी समय में यज्ञों में इन वचनों की उद्घोषणा द्वारा आप हमारी सेवा करें । हम (दोनों नदियाँ) आपको नमस्कार करती हैं । पुरुषों द्वारा सम्पादित कर्मों में कभी भी हमारी उपेक्षा न करें ॥८ ॥

२७६३. ओ षु स्वसारः कारवे शृणोत यथौ वो दूरादनसा रथेन ।
नि षू नमध्वं भवता सुपारा अधोअक्षाः सिन्धवः स्रोत्याभिः ॥९ ॥

हे भगिनी रूप (दोनों) नदियो ! हमारी स्तुति भलीप्रकार सुनें । हम आपके पास अति दूरस्थ देश से रथ और शकट को लेकर आये हैं । आप अपने प्रवाहों के साथ इतनी झुक जायें कि रथ की धुरी से नीचे हो जायें, जिससे हम सरलता से पार हो जायें ॥९ ॥

२७६४. आ ते कारो शृणवामा वचांसि ययाथ दूरादनसा रथेन ।
नि ते नंसै पीप्यानेव योषा मर्यायेव कन्या शश्वचै ते ॥१० ॥

हे स्तोता ! हम (दोनों नदियाँ) आपकी स्तुतियाँ सुनती हैं (आप दूरस्थ देश से रथ और शकट के साथ आए

Scanned with CamScanner

३२३५. एभिर्नृभिरिन्द्र त्वायुभिष्ट्वा मघवद्भिर्मघवन्विश्व आजौ ।
द्यावो न द्युम्नैरभि सन्तो अर्यः क्षपो मदेम शरदश्च पूर्वीः ॥१९ ॥

हे धनवान् इन्द्रदेव ! हम समस्त युद्धों में धन से सम्पन्न हों । द्युलोक के सदृश ओजस्वी अपने सहायक मरुतों के साथ होकर आप रिपुओं को परास्त करें । हम अनेक वर्षों तक रात-दिन आपको हर्षित करते रहें ॥१९ ॥

३२३६. एवेदिन्द्राय वृषभाय वृष्णे ब्रह्माकर्म भृगवो न रथम् ।
नू चिद्यथा नः सख्या वियोषदसन्न उग्रोऽविता तनूपाः ॥२० ॥

जिस प्रकार भृगुवंशियों ने इन्द्रदेव को रथ प्रदान किया था, उसी प्रकार हम शक्तिशाली तथा इच्छाओं की पूर्ति करने वाले इन्द्रदेव के निमित्त स्तोत्र पाठ करते हैं । इस प्रकार हमारी उनकी मित्रता परिपक्व हो । वे हमारे शरीर के पोषक तथा संरक्षक हों ॥२० ॥

३२३७. नू ष्टुत इन्द्र नू गृणान इषं जरित्रे नद्योऽ३ न पीपेः ।
अकारि ते हरिवो ब्रह्म नव्यं धिया स्याम रथ्यः सदासाः ॥२१ ॥

हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार सरिताएँ जल प्रदान करती हैं, उसी प्रकार आप स्तुतियों द्वारा प्रशंसित होकर हम याजकों के लिए अन्न प्रदान करें । हे अश्ववान् इन्द्रदेव ! हम आपके निमित्त अभिनव स्तोत्रों को रचते हैं, जिससे हम रथों से युक्त होकर आपके सेवक बने रहें ॥२१ ॥

[सूक्त - १७]

[**ऋषि** - वामदेव गौतम । **देवता** - इन्द्र । **छन्द** - त्रिष्टुप्, १५ एकपदा विराट् ।]

३२३८. त्वं महाँ इन्द्र तुभ्यं ह क्षा अनु क्षत्रं मंहना मन्यत द्यौः ।
त्वं वृत्रं शवसा जघन्वान्त्सृजः सिन्धूँरहिना जग्रसानान् ॥१ ॥

हे महान् इन्द्रदेव ! आपके क्षात्र-बल का धरती अनुसरण करती है तथा आपके महत्त्व को महिमावान् द्युलोक स्वीकार करता है । आपने अपनी सामर्थ्य से वृत्र का संहार किया तथा 'अहि' द्वारा अवरुद्ध की गयी सरिताओं को प्रवाहित किया ॥१ ॥

३२३९. तव त्विषो जनिमन्रेजत द्यौ रेजद्भूमिर्भियसा स्वस्य मन्योः ।
ऋघायन्त सुभ्वः पर्वतास आर्दन्धन्वानि सरयन्त आपः ॥२ ॥

महान् तेजस्विता से सम्पन्न हे इन्द्रदेव ! आपके पैदा होते ही, आपके मन्यु से भयभीत होकर आकाश-पृथिवी काँपने लगे तथा बृहत् मेघों के समूह भयभीत होने लगे । इन मेघों ने जीवों की प्यास को बुझाते हुए मरुस्थल में भी जल को प्रेरित किया (बरसाया) ॥२ ॥

३२४०. भिनद्गिरिं शवसा वज्रमिष्णन्नाविष्कृण्वानः सहसान ओजः ।
वधीद्वृत्रं वज्रेण मन्दसानः सरन्नापो जवसा हतवृष्णीः ॥३ ॥

रिपुओं को परास्त करने वाले इन्द्रदेव ने अपने ओज को प्रकट करके अपनी शक्ति से वज्र को प्रेरित किया और मेघों को विदीर्ण किया । उन्होंने सोमपान से हर्षित होकर अपने वज्र द्वारा वृत्र का संहार किया । वृत्र के नष्ट हो जाने पर जल आवरण (अवरोध) रहित होकर वेग के साथ प्रवाहित होने लगा ॥३ ॥

Scanned with CamScanner

अश्व जिस प्रकार रथ के जुए में जुड़ जाता है; उसी प्रकार विद्वान् (प्रतिक्षत्र) धुरी (यज्ञ) के साथ स्वयं योजित हो जाते हैं। हम भी उस विघ्नहर्त्ता और रक्षणकर्त्ता यज्ञ के भार को वहन करते हैं। इस भार-वहन से विमुक्त होने की इच्छा हम नहीं करते, बल्कि बारम्बार भार को धारण करने की कामना करते हैं। हे मार्ग जानने वाले देव ! आप हमारे मार्ग में अग्रगामी होकर सरल मार्ग द्वारा हमें ले चलें ॥१ ॥

[प्रतिक्षत्र सम्बोधन शौर्य- सम्पन्नों के लिए प्रयुक्त होता है। शौर्य सम्पन्न विद्वान् ही दायित्वों का भार उठाते हैं।]

४०३४. अग्न इन्द्र वरुण मित्र देवाः शर्धः प्र यन्त मारुतोत विष्णो ।
उभा नासत्या रुद्रो अध ग्नाः पूषा भगः सरस्वती जुषन्त ॥२ ॥

हे अग्नि, इन्द्र, वरुण, मित्र , मरुत् और विष्णु आदि देवताओ ! आप हमें सामर्थ्य प्रदान करें। दोनों अश्विनीकुमार, रुद्र, देवपत्नियाँ, पूषा, भग, सरस्वती हमारी हवियाँ ग्रहण करें ॥२ ॥

४०३५. इन्द्राग्नी मित्रावरुणादितिं स्वः पृथिवीं द्यां मरुतः पर्वताँ अपः ।
हुवे विष्णुं पूषणं ब्रह्मणस्पतिं भगं नु शंसं सवितारमूतये ॥३ ॥

इन्द्र, अग्नि, मित्र, वरुण, अदिति, पृथ्वी, द्युलोक, आदित्य, मरुत्, पर्वत समूह, जल, विष्णु, पूषा, ब्रह्मणस्पति, भगदेव और सविता आदि देवों का हम आवाहन करते हैं; वे इस यज्ञशाला में शीघ्र पधारें एवं हमारी रक्षा करें ॥३ ॥

४०३६. उत नो विष्णुरुत वातो अस्रिधो द्रविणोदा उत सोमो मयस्करत् ।
उत ऋभव उत राये नो अश्विनोत त्वष्टोत विभ्वानु मंसते ॥४ ॥

विष्णुदेव और अहिंसक वायुदेव तथा धन प्रदाता सोमदेव हमें सर्व सुख प्रदान करें। ऋभुगण, दोनों अश्विनीकुमार, त्वष्टा और विभुगण; ये सभी देव हमें ऐश्वर्य प्राप्ति के लिए अनुकूल प्रेरणा प्रदान करें ॥४ ॥

४०३७. उत त्यन्नो मारुतं शर्ध आ गमद्विक्षयं यजतं बर्हिरासदे ।
बृहस्पतिः शर्म पूषोत नो यमद्वरूथ्यं१ वरुणो मित्रो अर्यमा ॥५ ॥

वे स्वर्ग में रहने वाले एवं पूजनीय मरुद्गण हमारे यज्ञ में कुशाओं पर बैठने के लिए आगमन करें। बृहस्पति, पूषा, वरुण, मित्र और अर्यमादेव हमें गृह सम्बन्धी सभी सुख प्रदान करें ॥५ ॥

४०३८. उत त्ये नः पर्वतासः सुशस्तयः सुदीतयो नद्य१ स्त्रामणे भुवन् ।
भगो विभक्ता शवसावसा गमदुरुव्यचा अदितिः श्रोतु मे हवम् ॥६ ॥

वे उत्तम स्तुति के योग्य और दान देने वाली नदियाँ, हमारे परित्राण के लिए उद्यत हों। वे धनों को बाँटने वाले भगदेव अपने बल और संरक्षण साधनों के साथ हमारे निकट आगमन करें। व्यापक प्रभायुक्त अदिति देवी हमारे आवाहन को सुनें ॥६ ॥

४०३९. देवानां पत्नीरुशतीरवन्तु नः प्रावन्तु नस्तुजये वाजसातये ।
याः पार्थिवासो या अपामपि व्रते ता नो देवीः सुहवाः शर्म यच्छत ॥७ ॥

इन्द्रादि देवों की पत्नियाँ (स्तुतियों से) उत्साहित होकर हमारी रक्षा करें। उनके संरक्षण में हम पुत्रों और अन्न आदि के लाभ प्राप्त करें। ये देवियाँ चाहे पृथ्वी पर हों या अन्तरिक्ष और द्युलोक में हों; हमारे उत्तम आवाहन को सुनकर हमें सभी सुख प्रदान करने हेतु पधारें ॥७ ॥

४०४०. उत ग्ना व्यन्तु देवपत्नीरिन्द्राण्य१ग्नाय्यश्विनी राट् ।
आ रोदसी वरुणानी शृणोतु व्यन्तु देवीर्य ऋतुर्जनीनाम् ॥८ ॥

Scanned with CamScanner

हे इन्द्र और अग्निदेवो ! आप सोमरस तैयार करने वाले एवं यज्ञकर्ता की स्तुति सुनकर हवि की इच्छा से आएँ और सोमरस का पान करें ॥१५ ॥

[सूक्त - ६१]

[ऋषि - भरद्वाज बार्हस्पत्य । देवता - सरस्वती । छन्द -गायत्री; १-३, १३ जगती, १४ त्रिष्टुप् ।]

५००२. इयमददाद्रभसमृणच्युतं दिवोदासं वध्र्यश्वाय दाशुषे ।
या शश्वन्तमाचखादावसं पणिं ता ते दात्राणि तविषा सरस्वति ॥१ ॥

सरस्वती देवी ने आहुति देने वाले 'वध्र्यश्व' को, धैर्यवान्, ऋणमुक्त होने वाला पुत्र 'दिवोदास' प्रदान किया, जिसने 'पणि' नामक कष्ट देने वाले कंजूस का नाश किया । हे सरस्वती देवि ! आपके दान महान् हैं ॥१ ॥

५००३. इयं शुष्मेभिर्बिसखा इवारुजत्सानु गिरीणां तविषेभिरूर्मिभिः ।
पारावतघ्नीमवसे सुवृक्तिभिः सरस्वतीमा विवासेम धीतिभिः ॥२ ॥

जो सरस्वती देवी अपने बलवान् वेग से कमलनाल की तरह पर्वत के तटों को तोड़ देती हैं, हम उन सरस्वती देवी की भक्ति और सेवा करते हैं, वे हमारी रक्षा करें ॥२ ॥

५००४. सरस्वति देवनिदो निबर्हय प्रजां विश्वस्य बृसयस्य मायिनः ।
उत क्षितिभ्योऽवनीरविन्दो विषमेभ्यो अस्रवो वाजिनीवति ॥३ ॥

हे सरस्वती देवि ! आपने देवताओं की निन्दा करने वाले को नष्ट किया । आप उसी तरह कपटी-दुष्टों का नाश करें । मानवों के लाभ के लिए आपने संरक्षित भू-भाग प्रदान किए हैं । हे वाजिनीवति ! आपने ही मनुष्यों के लिए जल प्रवाहित किया है ॥३ ॥

५००५. प्र णो देवी सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती । धीनामवित्र्यवतु ॥४ ॥

सरस्वती देवी अनेक प्रकार के अन्न देने से अन्नवाली कहलाती हैं । वे रक्षा करती हैं । वे देवि हमें उत्तम प्रकार से तृप्त करें ॥४ ॥

५००६. यस्त्वा देवि सरस्वत्युपब्रूते धने हिते । इन्द्रं न वृत्रतूर्ये ॥५ ॥

जिस प्रकार इन्द्रदेव को युद्ध में शत्रुओं से रक्षा करने के निमित्त बुलाते हैं, उसी प्रकार युद्ध के प्रारम्भ के समय जो आपका आवाहन करता है, आप उसकी रक्षा करती हैं ॥५ ॥

५००७. त्वं देवि सरस्वत्यवा वाजेषु वाजिनि । रदा पूषेव नः सनिम् ॥६ ॥

हे सरस्वती देवि ! आप बल से युक्त हैं । आप संग्राम के समय हमारी रक्षा करें एवं पूषन्देव की तरह हमें धन प्रदान करें ॥६ ॥

५००८. उत स्या नः सरस्वती घोरा हिरण्यवर्तनिः । वृत्रघ्नी वष्टि सुष्टुतिम् ॥७ ॥

स्वर्णिम रथ पर आरूढ़, प्रचण्ड वीरता धारण करने वाली देवी सरस्वती शत्रुओं का नाश करती हैं और स्तोताओं की रक्षा करती हैं ॥७ ॥

५००९. यस्या अनन्तो अह्रुतस्त्वेषश्चरिष्णुरर्णवः । अमश्चरति रोरुवत् ॥८ ॥

उन (सरस्वती) का निरन्तर प्रवाहित जल, वेग से गमन करता हुआ, गर्जन (शब्द) करता है ॥८ ॥

५०१०. सा नो विश्वा अति द्विषः स्वसॄरन्या ऋतावरी । अतन्नहेव सूर्यः ॥९ ॥

Scanned with CamScanner

जिस प्रकार सूर्यदेव प्रकाश फैलाते हैं, वैसे ही देवी सरस्वती शत्रुओं को परास्त करती हुई बहिनों सहित आती हैं ॥९ ॥

५०११. उत नः प्रिया प्रियासु सप्तस्वसा सुजुष्टा । सरस्वती स्तोम्या भूत् ॥१० ॥

प्रियजनों में अतिप्रिय, सप्त बहिनों (सात छन्दों अथवा सहायक धाराओं) से युक्त देवी सरस्वती हमारे लिए स्तुत्य हैं ॥१० ॥

५०१२. आपप्रुषी पार्थिवान्युरु रजो अन्तरिक्षम् । सरस्वती निदस्पातु ॥११ ॥

जिन देवी सरस्वती ने स्वर्ग और पृथ्वी को अपने तेज से भर दिया है, वे हमें निन्दा करने वालों से बचाएँ ॥११ ॥

५०१३. त्रिषधस्था सप्तधातुः पञ्च जाता वर्धयन्ती । वाजेवाजे हव्या भूत् ॥१२ ॥

जो देवी सरस्वती तीन स्थानों (प्रदेशों) में रहने वाली (बहने वाली), सप्त धारक शक्तियों से युक्त, पाँचों वर्ण के मनुष्यों को बढ़ाने वाली हैं, वे संग्राम के समय आवाहन करने योग्य हैं ॥१२ ॥

५०१४. प्र या महिम्ना महिनासु चेकिते द्युम्नेभिरन्या अपसामपस्तमा ।
रथ इव बृहती विभ्वने कृतोपस्तुत्या चिकितुषा सरस्वती ॥१३ ॥

जो देवी सरस्वती अपने महत्त्व और तेज के प्रभाव के कारण अन्य नदियों में श्रेष्ठ हैं । अन्य नदियों के प्रवाहों की अपेक्षा इनका प्रवाह अधिक तीव्र गति वाले रथ के वेग के समान है; वे गुणवती देवी सरस्वती विद्वान् स्तोताओं द्वारा स्तुत्य हैं ॥१३ ॥

५०१५. सरस्वत्यभि नो नेषि वस्यो माप स्फरीः पयसा मा न आ धक् ।
जुषस्व नः सख्या वेश्या च मा त्वत्क्षेत्राण्यरणानि गन्म ॥१४ ॥

हे सरस्वती देवि ! आप हमें उत्तम धन प्रदान करें । हमें आपके प्रवाह कष्ट न दें । आप हमारे बन्धुत्व को स्वीकार करें । हम निकृष्ट स्थान को न जाएँ ॥१४ ॥

[सूक्त - ६२]

[**ऋषि** - भरद्वाज बार्हस्पत्य । **देवता** -अश्विनीकुमार । **छन्द** - त्रिष्टुप् ।]

५०१६. स्तुषे नरा दिवो अस्य प्रसन्ताश्विना हुवे जरमाणो अर्कैः ।
या सद्य उस्रा व्युषि ज्मो अन्तान्युयूषतः पर्युरू वरांसि ॥१ ॥

हम उन दोनों अश्विनीकुमारों की उत्तम स्तोत्रों से स्तुति करते हैं, जो अश्विनीकुमार इस दृश्य जगत् को प्रकाशित करते हैं । वे बलवान् शत्रुओं का नाश करते हैं ॥१ ॥

५०१७. ता यज्ञमा शुचिभिश्चक्रमाणा रथस्य भानुं रुरुचू रजोभिः ।
पुरू वरांस्यमिता मिमानापो धन्वान्यति याथो अज्रान् ॥२ ॥

जब दोनों अश्विनीकुमार अपने तेज को बढ़ाते हुए यज्ञशाला में आते हैं, उस समय उनके तेज से रथ भी प्रदीप्त हो उठता है । वे मरुभूमि को छोड़कर अपने अश्वों को जल के निकट ले जाते हैं ॥२ ॥

५०१८. ता ह त्यद्वर्तिर्यदरध्रमुग्रेत्था धिय ऊहथुः शश्वदश्वैः ।
मनोजवेभिरिषिरैः शयध्यै परि व्यथिर्दाशुषो मर्त्यस्य ॥३ ॥

Scanned with CamScanner